पूर्व जुड़ता है– अव्ययसर्वनाम्नामकच् प्राक् टेः। अकच् प्रत्यय जुड़ कर एषकस् यह स्थिति बनती है। जैसे एषकस् रुद्रः अर्थात् यह रुद्र। यहाँ हप् परे होने पर स् का लोप नहीं होगा। ससजुषो से रुत्व और हशि च सूत्र से रु को उ होकर रूप तथा आद्गुणः से गुण होकर रूप बनेगा– एषको रुद्रः। नञ् समास में भी सु का लोप नहीं होता है जैसे असः शिवः (उससे भिन्न शिव)। हल् परे होने पर ऐसा क्यों कहा? क्योंकि अच् परे होने पर सु का लोप नहीं होता है जैसे एषोऽत्र। यहाँ स् को ससजुषो रुः से रुत्व, अतो रोरप्लुतादप्लुते से र् को उत्व, आद्गुणः से गुण और एङः पदान्तादति से पूर्वरूप एकादेश होकर एषोऽत्र रूप बनता है।

सोऽचि लोपे चेत् पादपूरणम् 3.1.134

स इत्यस्य सोर्लोपः स्यादचि पादश्चेल्लोपे सत्येव पूर्येत। सेमामविड्ढि प्रभृतिम्। सैष दाशरथी रामः।

व्याख्याः अच् परे होने पर सः के सु का लोप हो जाता हे यदि पाद की पूर्ति में इसकी आवश्यकता हो। पूर्व सूत्र द्वारा हल् परे होने पर ही सः के सु का लोप बताया गया है, अच् पर होने पर नहीं। परन्तु यदि पाद की पूर्ति के लिए आवश्यकता हो तो सः के सु का अच् परे होने पर भी लोप हो जाता है। जैसे– सेमामविड्ढि प्रभृति य ईशिषे यह वेद के जगती छन्द का उदाहरण है। जगती छन्द में 12 अक्षर होते हैं। यदि सः के सु का लोप करके सन्धि नहीं होती तो 12 अक्षर से अधिक हो जाते और पाद की पूर्ति नहीं होती। इसी प्रकार – सैषः दाशरथी रामः यह अनुष्टुप् छन्द का लौकिक उदाहरण हैं अनुष्टुप् में आठ अक्षर होते हैं जो सः के सु का लोप करके और गुण सन्धि करके ही पूरा हो सकता है।

सः के सु का लोप न किया जाए तो सकार को रुत्व और भो भगो अघो अपूर्वस्य योऽशि से र् को यकार होगा और लोपः शाकल्यस्य से विकल्प से लोप होकर स एष रूप बनेगा। लोपः शाकल्यस्य के असिद्ध हाने के कारण गुण सन्धि नहीं हो सकेगी। इस प्रकार स एष दशरथी रामः यह स्थिति होगी इसमें 9 अक्षर होने के कारण पाद की पूर्ति नहीं हो सकेगी।

(सन्धि प्रकरण समाप्त)

1.5 स्त्री प्रत्यय (अर्थ व्याख्या एवं रूपसिद्धि)

स्त्रियाम् 4.2.3

अधिकारोऽयम् 'समर्थानाम्–' इति यावत्।

व्याख्याः यह अधिकार सूत्र है। यह अधिकार 'समर्थानां प्रथमाद् वा 4।1।82।।' सूत्र तक है अर्थात् उससे पूर्व के सूत्रों में 'स्त्रियाम्' यह पद उपस्थित होता है–अतः वे सूत्र स्त्रीत्व बोधन के लि प्रत्यय करते हैं।

अजाद्यतष्टाप् 4.1.4

अजादीनाम्, अकारान्तस्य च वाच्यं यत् स्त्रीत्वम्, तत्र द्योत्ये टाप् स्यात्। अजा। एडका। अश्वा। चटका। मृषिका। वाला। वत्सा। होडा। मन्दा।विलाता–इत्यादिः अजादिगणः। सर्वा।

व्याख्याः अजाद्यत इति–अज आदि और अकारान्त शब्दों का जब स्त्रीत्व कहना हो, तब इन प्रातिपदिकों से टाप् हो।

टाप् का टकार और पकार इत्संज्ञक है।

अजा (बकरी)यहाँ अजादिगण के प्रथम शब्द अज से स्त्रीत्व अर्थ बोधन के लिये प्रकृत सूत्र से टाप् प्रत्यय हुआ। तब टाप् के आकार के साथ 'अज' के अन्त्य अकार के स्थान में सवर्ण दीर्घ होने पर 'अज' शब्द बना। प्रथमा के एकवचन में सु के अपृक्त सकार आबन्त से परे होने के कारण 'हल्–ङ्याब्भ्यो दीर्घात्

सुतिस्यपृक्तं हल6.1.68' इस सूत्र से लोप होकर रूप सिद्ध हुआ। इन स्त्रीप्रत्ययान्त अजा आदि शब्दों से सु आदि की उत्पत्ति आबन्त होने के कारण 'ङ्याप्–प्रातिपदिकात् 4.1.1' इस सूत्र के अधिकार के बल से अथवा 'प्रातिपदिकग्रहणे लिङ्गविशिष्टस्यापि ग्रहणम्–प्रातिपदिक का सामान्य या विशेष रूप से ग्रहण होने पर लिङ्ग–विशिष्ट का भी ग्रहण होता है'– इस परिभाषा के बल से होती है। इसी प्रकार –एडक (भेड़ा) से एडका (भेड़, अश्व (घोड़ा) से अश्वा (घोड़ी, चटक (चिड़ा) से चटका (चिड़िया, मूषक (चूहा) से मूषिका (चुहिया), बाल से बाला, वत्स से वत्सा, होड़ से होडा, मन्द से मन्दा और विलात से बिलाता–शब्द सिद्ध होते हैं। अन्तिम पाँच शब्दों का अर्थ कुमार है। सभी शब्द अजादि गण के हैं। सर्वा–यहाँ अकारान्त सर्व शब्द से टाप् प्रत्यय हुआ।

उगितश्च 4.1.6

उगिदन्तात प्रातिपदिकात् स्त्रियां ङीप् स्यात्। भवन्ती। पचन्ती। दीव्यन्ती।

व्याख्याः उगित प्रत्यय जिस प्रातिपदिक के अन्त में हो उससे स्त्री बोधक के लिये ङीप् प्रत्यय हो।

ङीप् प्रत्यय के ङकार और पकार इत्संज्ञक है, ई शेष रहता है।

कृदन्त प्रकरण में बताया गया शतृ प्रत्यय ऋकार उक के इत् होने से उगित् है, अतः तदन्त शब्दों से इस सूत्र के अनुसार स्त्रीलिङ्ग में ङीप् प्रत्यय होगा और तद्धित ईयसुन प्रत्यय भी उकार उक् के इत्संज्ञक होने के कारण उगित् है, अतः इयसुन् प्रत्ययान्त शब्दों से भी प्रत्यय होगा।

भवन्ती (होती हुई) यहाँ शतृप्रत्ययान्त भवत् शब्द से उगिदन्त होने के कारण प्रकृत सूत्र से ङीप् प्रत्यय हुआ। तब उसके परे होने पर 'शप्श्यनोर्नित्यम् 7.1.81' से नुम् आगम होकर रूप सिद्ध हुआ।

भा धातु से डवतु प्रत्यय होकर सिद्ध हुए भवत् (टाप्) के उगिदन्त होने के कारण उससे ङीप् होकर 'भवति' रूप बनता है। यहाँ नुम् नहीं होता। इसी प्रकार–शतृ प्रत्ययान्त पचत् और दीव्यत् शब्दों से पचन्ती (पकाती हुई) और दीव्यन्ती (खेलती हुई) रूप सिद्ध होते है।

ये सब उदाहरण प्रथमा के एकवचन में दिये गये हैं। आबन्त और ङीबन्त से प्रथमा के एकवचन सु के अपृक्त सकार का 'हलङ्याब्भ्यो दीर्घात् सुतिस्यपृक्तं हल् 6.1.68' से लोप होकर रूप बनता है। ईयसुन् प्रत्ययान्त के उदाहरण मूल में नहीं दिये गये हैं–श्रेयस्–श्रेयसी (कल्याणकारिणी), पटीयस्–पटीयसी (अति चतुर स्त्री) और नेदीयस्–नेदीयसी (निकट स्थिता) इत्यादि।

टिड्–ढाऽण्–अञ्–द्वयसच्–दध्नञ्–मात्रच्–तयपठक्–ठञ्–कञ्क्वरपः 4.5.15

अनुपसर्जनं यत् टिद्–आदि तदन्तं यद् अदन्तं प्रातिपदिकम, ततः स्त्रिया ङीप् स्यात् कुरुचरी। नदट्–नदी। देवट्–देवी। सौंपर्णयी। ऐन्द्री। औत्सी। ऊरुद्वयसी। ऊरु–दध्नी। ऊरुमात्री। पंच–तयी। आक्षिकी। ग्रास्थिकी। लावणिकी। यादृशी। इत्वरी।

व्याख्याः अनुपसर्जन (जो गौण न हो) आकारान्त टिदन्त और ढ, अण्, अञ्, द्वयसच्, दध्नञ्, मात्रच्, तयप्, ठक, टञ्, कञ् और क्वरप् इन प्रत्ययान्त प्रातिपदिकों से स्त्रीलिङ्ग में ङीप् प्रत्यय हो।

ढआदि ग्यारह तद्धित प्रत्यय हैं। टित् प्रत्यय कृदन्त क ट टक् हैं और देवट् तथा नदट् शब्द भी टित् हैं। आगे इनके उदाहरण क्रमशः दिये जाते हैं। **कुरु–चरी** (कुरुषु चरति स्त्री–कुरुदेश में घूमनेवाली स्त्री)–यहाँ

[5]. *स्वार्थ, द्रव्य, लिङ्ग, संख्या और कारक–ये पाँच प्रातिपदिक के अर्थ हैं–इस पक्ष में लिङ्ग के प्रातिपदिकार्थ होनेसे प्रत्यय उसके द्योतक होते हैं लिङ्ग को प्रातिपदिकार्थ न माननेवालों के पक्ष में वाचक।*

'चरेष्टः3.2.16. ' सूत्र से सुबन्त उपपद रहते चर् धातु से ट प्रत्यय होकर सिद्ध हुए कुरुचर शब्द से स्त्रीलिङ्ग में प्रकृत सूत्र से ङीप् प्रत्यय हुआ। तब 'यस्येति च 6.4.148' अकार का लोप होकर रूप सिद्ध हुआ।

नदी–'नदट्' इस टि् प्रातिपदिक में प्रकृत सूत्र से ङीप् प्रत्यय होने 'यस्येति च' से अकार का लोप होकर रूप सिद्ध हुआ। देवी–देवट् शब्द से ङीप् प्रत्यय होकर पूर्ववत् रूप सिद्ध हुआ। सौपर्णेयी (सुपर्णी की कन्या, गरुड़ की बहन) यहाँ सुपर्णी शब्द से अपत्य अर्थ में 'स्त्रीभ्यो ढक् 4.1.120' से ढक् प्रत्यय होकर, उसको ' आयन्–7.1.2' इत्यादि सूत्र से 'एय्' आदेश, आदि वृद्धि, पूर्व ईकार का 'यस्येति च' से लोप होने पर सिद्ध हुए सौपर्णेय इस ढ प्रत्ययान्त प्रातिपदिक से सूत्र से ङीप् हुआ। तब 'यस्येति च' से प्रातिपदिक से अन्त्य अकार का लोप होकर रूप सिद्ध हुआ।

ऐन्द्री (इन्द्रो देवता अस्याः इन्द्र जिसका देवता है अथवा इन्द्र की)।

यहाँ इन्द्र शब्द से 'साऽस्य देवता4.2.24' अथवा 'तस्येदम् 4.3.120' से अण् होने पर, अकार का लोप और आदिवृद्धि होकर सिद्ध हुए ऐन्द्र–इस अण्णन्त प्रातिपदिक से प्रकृत सूत्र से ङीप् प्रत्यय हुआ। तब अकार का लोप होने पर रूप सिद्ध हुआ। **औत्सी** (उत्सस्येयम्, उत्स–झरना या ऋषिविशेष सम्बन्धिनी)। यहाँ उत्स शब्द से 'उत्सादिभ्योऽञ् 4.1.86' सूत्र से अञ् प्रत्यय होने पर सिद्ध हुए औत्स इस अञ् प्रत्ययान्त शब्द से प्रकृत से ङीप् हुआ। तब 'यस्येति च' पूर्व अकार का लोप होकर रूप सिद्ध हुआ।

ऊरु–द्वयसी, ऊरु–दघ्नी, ऊरु–मात्री (ऊरूप्रमाणमस्याः, ऊरुप्रमाण जलवाली–तलैया, छोटा तालाब आदि।यहाँ ऊरु शब्द से प्रमाण अर्थ में 'प्रमाणे द्वयसच्–दघ्नञ्–मात्रचः5.2.37' से द्वयसच्, दघ्नञ् और मात्रच्–प्रत्यय होने पर सिद्ध हुए ऊरुद्वयस, ऊरुदघ्न और ऊरुमात्र–इन प्रातिपदिकों से ङीप् प्रत्यय हुआ। तब 'यस्येति च' से अन्त्य अकार का लोप होकर रूप सिद्ध हुआ।

पंच–तयी (पंच अवयवा अस्याः –पाँच अवयववाली)। यहाँ पंचन् शब्द से अवयव अर्थ में 'संख्याया अवयवे तयप् 5.2.42' से तयप् प्रत्यय होने पर नकार का लोप होकर सिद्ध हुए पंचतय प्रातिपदिक से ङीप् प्रत्यय हुआ।

आक्षिकी (अक्षैर्दीव्यति, पासों से खेलनेवाली)–यहाँ अक्ष शब्द से 'तेन् दीव्यति खनति जयति जितम् 4.4.2' से ठक् प्रत्यय होने पर ठकार को इक्, 'यस्येति च' से अकार का लोप और आदिवृद्धि होकर सिद्ध हुए 'आक्षिक' शब्द से प्रकृत से ङीप् हुआ। तब 'यस्येति च' से अन्त्य अकार का लोप होकर रूप सिद्ध हुआ।

प्रास्थिकी (प्रस्थेन क्रीता, एक प्रस्थ से खरीदी हुई)–यहाँ प्रस्थ शब्द से क्रीत अर्थ में–'तेन क्रीतम'– से ठक् प्रत्यय होकर प्रास्थिक शब्द बना। इससे ङीप् होकर उक्त रूप सिद्ध हुआ।

लावणिकी (लवणं पण्यमस्य, नमक बेचनेवाली)। यहाँ लवण शब्द से 'तदस्य पण्यम्–4.4.51 यह इसका विक्रेता है' इस अर्थ में 'लवणात् ठञ्4.4.52 से ठञ् होकर सिद्ध हुए लावणिक शब्द से ङीप् प्रत्यय हुआ। तब 'यस्येति च' से अकार का लोप होने पर रूप सिद्ध हुआ।

यादृशी (जैसी)–यहाँ यत् शब्द उपपद रहते दृश् धातु से 'यदादिषु दृशोऽनालोचने कञ् च 3.2.60' से कञ् प्रत्यय होने पर 'आ सर्वनाम्नः 6.3.71' से यत् शब्द को आकार अन्तादेश ओर सवर्ण दीर्घ होकर सिद्ध हुए यादृश कञन्तप्रातिपदिक से प्रकृतसूत्र से ङीप् हुआ। तब 'यस्येति च' से लोप होकर रूप सिद्ध हुआ। **इत्वरी** (व्यभिचारिणी)। यहाँ 'इण् गतौ' धातुसे 'इण्–नशि–जि–सर्तिभ्यः क्वरप् 3.2.163' से तुक् आगम होकर'इत्वर' शब्द बना। क्वबरन्त होने के कारण इससे ङीप् हुआ और 'यस्येति च' से अन्त्य अकार का लोप होकर रूप सिद्ध हुआ।

(वा) नञ स्नञ्–ईकक्–ख्युनु–तरुण–तलुनानाम् उपसंख्यानम्। स्त्रैणीपौंस्नी। शाक्तीकी। आढ्यङ्करणी। तरुणी। तलुनी।

व्याख्याः नञ्, स्नञ, ईकक्, ख्युन्– ये प्रत्यय जिनके अन्त में हो, उनसे तथा तरुण और तलुन–इन प्रातिपदिकों से स्त्रीत्व विवक्षा में ङीप् प्रत्यय हो। ईकक्, नञ् और स्नञ् ये तद्धित प्रत्यय हैं और ख्युन् कृत् प्रत्यय है। स्त्रैणी, पौंस्नी (स्त्रीसम्बन्धी, पुरुष–सम्बन्धिनी)। यहाँ स्त्री और पुरुष शब्दों से 'स्त्रीपुंसाभ्यां नञ्स्नञौ भवनात् 4.1.87' से क्रमशः नञ् और स्नञ्प्रत्यय होने पर आदिवृद्धि, स्त्री शब्द से प्रत्यय नकार को णकार होकर सिद्ध हुए स्त्रैण और पौंस्नशब्दों से प्रकृत वार्तिक से ङीप् प्रत्यय हुआ। तब 'यस्येति च' से अन्त्य अकार का लोप होकर रूप सिद्ध हुआ।

शाक्तीकी (शक्तिः आयुधविशेषः प्रहरणम् अस्याः–शक्ति नाम का अस्त्र जिसका हथियार है वह स्त्री)। यहाँ शक्तिशब्द से 'शक्तियष्ट्योरीकक्' से ईक्क् प्रत्यय आदिवृद्धि, अन्त्य इकार का 'यस्येति च' लापे होकर सिद्ध हुए 'शाक्तीक' शब्द से प्रकृत वार्तिक से ङीप् होने पर 'यस्येति च 6.4.148' से अन्त्य अकार का लोप होकर रूप सिद्ध हुआ। आढ्यङ्करणी (अनाढ्य आढ्यः क्रियतनेऽया–जो अनाढ्य को आढ्य धनवान् बनावे)। यहाँ आढ्य पद उपपद रहते कृ धातु से 'आढ्य–सुभग 3.2.56' से ख्युन् प्रत्यय हुआ, तब 'यू' को अन आदेश, 'अरुर्द्विषदजन्तस्य मुम् 6.3.67' से मुम् आगम और नकार को णकार होकर 'आढ्यकरण'। तब 'यस्येति च' सूत्र से अन्त्य अकार का लोप होकर रूप सिद्ध हुआ। तरुणी, तलुनी (युवती)–यहाँ तरुण और तलुन शब्द से प्रकृत वार्तिक से ङीप् हुआ। तब 'यस्येति च' से अन्त्य अकार का लोप होकर रूपसिद्ध हुआ।

ङीप् आदि स्त्रीप्रत्यय अजादि हैं, अतः इनके परे रहते पूर्व की भसंज्ञा होती है, तब 'यस्येति च' पूर्व अवर्ण और इवर्ण का लोप हो जाता है–इस बात का सदा ध्यान रहना चाहिये। तद्धित प्रत्यय होने पर यदि वह अजादि हो तो 'यस्येति च' सूत्र लगता है, जैसा कि तद्धित प्रकरण में यत्र तत्र दिखाया गया है।

यञश्च4.1.16

यञन्तात् स्त्र्यां 'ङीप्' स्यात्। अकार–लोपे कृते–

व्याख्याः यञन्त से स्त्रीलिङ्ग में ङीप् प्रत्यय हो।

अकारेति–ङीप् होने पर यञन्त के अन्त्य अकार का जैसा ऊपर कहा गया है 'यस्येति च 6.3.148' से लोप हुआ।

हलस्तद्धितस्य 6.3.150

हलः परस्य तद्धित–यकारस्योपधाभूतस्य लोप ईकारे परे। गार्गी।

व्याख्याः हल से परे तद्वित के उपधाभूत यकार का लोप हो ईकार परे रहते।

गार्गी (गार्ग्य स्त्री, गर्ग गोत्र की स्त्री)–यहाँ 'गर्गादिभ्यो यञ्4.1.105' से गर्ग शब्द से गोत्र अर्थ में यञ् प्रत्यय होने पर 'यस्येति च' से अन्त्य अकार के लोप होकर सिद्ध हुए यञन्त गार्ग्य शब्द से पूर्वसूत्र से ङीप् प्रत्यय हुआ। तब पूर्वोक्त प्रकार से अन्त्य अकार का लोप होने पर प्रकृत सूत्र से यकार का लोप होकर रूप सिद्ध हुआ।

प्राचां ष्फस्तद्धितः4.1.17

यञन्तात् ष्फो वा स्यात्, स च तद्धितः।

व्याख्याः यञन्त से ष्फ प्रत्यय हो स्त्रीलिङ्ग में और वह तद्धित संज्ञक हो।

'ष्फ' प्रत्यय की तद्धित संज्ञा करने का फल प्रातिपदिक संज्ञा है। तद्धितान्त होने के कारण ष्फप्रत्ययान्त शब्द से स्त्रीत्व विवक्षा में अग्रिम सूत्र से ङीष् प्रत्यय होता है।

ष्फ प्रत्यय के आदि षकार की 'षः प्रत्ययस्य 1.3.6' से इत्संज्ञा होती है और फकार को 'आयन–एय्–ईन्–इयः फ–ढ–ख–छ–घां प्रत्ययादीनाम् 7.1.2' से 'आयन्' आदेश होता है।

षिद्–गौरादिभ्यश्च 4.1.41

षिद्भ्यो गौरादिभ्यश्च ङीष्। गार्ग्यायणी। नर्तकी। गौरी।

व्याख्याः षिद्गौरादिभ्य–षित् और गौर आदि शब्दों से ङीप् प्रत्यय हो।

ङीष् का 'ई' शेष रहता है, शेष भाग इत्संज्ञक है। ङीप् और ङीष्–दोनों का केवल ईकार शेष रहने पर भी स्वर में दोनों का अन्तर पड़ता है। ङीप् का ईकार पित् होने से अनुदात्त होता है और ङीष् का ईकार उदात्त। **गार्ग्यायणी** (गर्गस्यापत्यं स्त्री–गर्ग की अपत्य स्त्री)। यहाँयञन्त गार्ग्य शब्द से पूर्वसूत्र से ष्फ प्रत्यय हुआ, षकार की इत्संज्ञा, फकार को आयन् आदेश 'यस्येति च' से यकारोत्तरवती अकार का लोप और णत्व होने पर सिद्ध हुए 'गार्ग्यायण' शब्द से षित् होने के कारण प्रकृत सूत्र से ङीष् प्रत्यय हुआ। फिर 'यस्येति च' से णकारोत्तर अकार का लोप होकर रूप सिद्ध हुआ।

नर्तकी (नाचनेवाली)। यहाँ नृत् धातु से 'शिल्पिनि ष्वुन् 3.1.145' से ष्वुन् प्रत्यय से सिद्ध हुए नर्तक शब्द से षित् होने कारण प्रकृत सूत्र से ङीष् हुआ। तब 'यस्येति च' से अन्त्य अकार का लोप होकर रूप सिद्ध हुआ। **गौरी** (गौरवर्ण की स्त्री)। यहाँ गौर आदि गण के आदि शब्द गौर से प्रकृत सूत्र से ङीष् प्रत्यय हुआ। तब अन्त्य अकार का लोप होकर रूप बना।

(वा) आम् अनडुहः स्त्रियां वा। अनड्वाही, अनडुही। आकृतिगणोऽयम्।

व्याख्याः (वा) स्त्रीलिङ्ग में अनडुह् शब्द को आम् विकल्प से हो।

अनड्वाही, अनडुही गौ)– यहाँ गौरादि गण के अनुडुह् शब्द से स्त्रीलिङ्ग में ङीष् प्रत्यय हुआ। तब प्रकृत वार्तिक से आम् आगम होने पर उकार को यण् वकार होकर अनड्वाही रूप सिद्ध हुआ। आम् के अभावपक्ष में अनडुही रूप बना।

आकृतिगण इति–गौरादि आकृतिगण है। अतः अन्य शब्द भी जो इस प्रकार के हो, उन्हें इसके अन्तर्गत समझना चाहिये।

वयसि प्रथमे 4.1.20

प्रथमवयो–वाचिनोऽदन्तात् स्त्रियां ङीप् स्यात्। कुमारी।

व्याख्याः वयसीति–प्रथम अवस्था के वाचक अदन्त प्रातिपदिक से स्त्रीलिङ्ग में ङीष् प्रत्यय हो। अवस्था तीन हैं–कौमार, यौवन और वार्द्धक्य। प्रथम अवस्था कौमार है। कौमार अवस्था के वाचक शब्द से ही सूत्र ङीष् प्रत्यय का विधान करता है। कुमारी (अविवाहित लड़की) –यहाँ प्रथम अवस्था के वाचक कुमार शब्द से

प्रकृत सूत्र से ङीष् प्रत्यय हुआ। तब'यस्येति च' से अन्त्य अकार का लोप होकर रूप सिद्ध हुआ। इस सूत्र पर वार्तिक है 'वयसि–अ–चरमे' इस वार्तिक से यौवन अवस्था के वाचक शब्दों से भी उक्त प्रत्यय होता है। यह वार्तिक कहता है। अतएव वधूट और चिरण्ट इन दो शब्दों से नहीं होता, अन्य दोनों से होता है। अतएव वधूट और चिरण्ट इन दो शब्दों से –जो यौवन के वाचक हैं –भी ङीष होकर–वधूटी और चिरण्टी शब्द बनते हैं।

द्विगोः 4.1.21

अदन्ताद् द्विगोः 'ङीप्' स्यात्। त्रिलोकी। अजादित्वात्–त्रिफला, त्र्यनीका–सेना।

व्याख्याः द्विगोरिति–अदन्त द्विगु से ङीप् प्रत्यय हो।

त्रिलोकी (त्रयाणां लोकानां समाहारः, तीन लोकों का समुदाय) –यहाँ 'संख्या –पूर्वो द्विगुः 2.1.52' और 'अकारान्तोत्तरपदो द्विगुः स्त्रियामिष्टः' इसमें स्त्रीत्व का नियम होन से 'त्रिलोक' शब्द से प्रकृत सूत्र द्वारा ङीप् प्रत्यय हुआ। तब 'यस्येति च' से अन्त्य अकार का लोप होकर रूप सिद्ध हुआ। त्रिफला (त्रायाणां फलानां समाहारः, हरड़, बहेड़ा और आंवला –यहाँ अकारान्त द्विगु होने पर भी अजादिगण के अन्तर्गत होने से 'अजाद्यतष्टाप् 4.1.2' इस सूत्र के द्वारा 'त्रिफल' शब्द से टाप् प्रत्यय होकर रूप सिद्ध हुआ।

त्रयनीका (त्रयाणामनीकानां समाहारः सेना)। यहाँ भी पूर्ववत् अजादिगण के अन्तर्गत होने से 'अजाद्यतष्टाप्' से टाप् प्रत्यय हुआ।

वर्णाद् अनुदात्तात् तोपधात् तो नः 4.1.39

वर्ण–वाची योऽनुदात्तान्तस्तोपधः तदन्ताद् अनुपसर्जनात् प्रातिपदिकाद् वा ङीप्, तकारस्य नकारादेशश्च। एनी, एता। रोहिणी, रोहिता।

व्याख्याः वर्णवाची जो अनुदात्तान्त नकारोपध शब्द तदन्त प्रातिपदिक से ङीप् हो विकल्प से और तकार को नकार आदेश भी।

एनी, एता (चितकबरी)– यहाँ वर्णवाची शब्द 'एत' अनुदात्तान्त है, क्योंकि तकारान्त वर्णवाची शब्द का आदि अच् '(फि. सू. 33) वर्णानां त–ण–ति–नि–ताऽतानाम्' इस फिट् सूत्र से उदात्त होता है, अन्त्य अकार अनुदात्त है। इसकी उपधा तकार है। यह किसी के प्रति गौण न होने से अनुपसर्जन भी है। अतः यहाँ प्रकृत सूत्र से ङीप् प्रत्यय और तकार को नकार होकर रूप सिद्ध हुआ। अभावपक्ष में अकारान्त होने से 'अजाद्यतष्टाप्' से टाप् प्रत्यय हुआ। **रोहिणी, रोहिता** (लाल रङ्गवाली)–यहाँ रोहित इस वर्णवाची अनुदात्तान्त तोपध अनुपसर्जन प्रातिपदिक से ङीप् और तकारको नकार होकर रूप सिद्ध हुआ। अभावपक्ष में टाप् हुआ।

वोतो गुण–वचनात् 4.1.44

उदन्ताद गुण–वाचिनो वा ङीष् स्यात्। मृद्वि, मृदुः।

व्याख्याः उकारान्त गुणवाचक शब्द से स्त्रीलिङ्ग में ङीष् प्रत्यय हो विकल्प से।

मृद्वि, मृदुः (कामेला)। यहाँ उकारान्त गुणवाचक मृदुशब्द से प्रकृत सूत्र से ङीप् प्रत्यय हुआ, उकार को यण् होकर रूप बना। अभाव पक्ष में वैसे हो रहा।

बह्वादिभ्यश्च 4 |1 |45 | |

एभ्यो वा ङीष् स्यात। बह्वी, बहुः।

व्याख्याः बहु आदि गण से ङीप् प्रत्यय हो विकल्प से। बह्वी, बहुः (बहुत, स्त्रीलिङ्ग)। यहाँ बहु शब्द से ङीप् प्रत्यय होने पर उकार को यण होकर रूप बना। अभावपक्ष में यथावत् रूप रहा।

(ग. सू.) कृद् इकाराद् अक्तिनः। रात्रिः, रात्री।

व्याख्याः (ग) कृदइकारादिति—कृत् प्रत्यय का जो इकार, तदन्त प्रातिपदिक से ङीप् प्रत्यय हो विकल्प से, परन्तु क्तिन् प्रत्ययान्त से न हो। रात्री, रात्रिः (रात) —यहाँ रा धातु से 'रा—शादिभ्यस्त्रिप्' इस उणादि सूत्र से त्रिप् प्रत्यय होकर रात्रि शब्द बना। यहाँ कृत् प्रत्यय का इकार है, तदन्त रात्रि शब्द से ङीप् प्रत्यय हुआ। तब 'यस्येति च' से इकार का लोप होकर रूप सिद्ध हुआ। अभावपक्ष में जैसे का तैसा रूप रहा।

(ग. सू.) सर्वतोऽक्तिन्नर्थाद् इति एके। शकटी शकटिः।

व्याख्याः सर्वत इति—क्तिन् प्रत्यय के अर्थ में विहित जो प्रत्यय, तदन्त से भिन्न इकारान्त मात्रा से ङीष् हो ऐसा कुछ एक आचार्य मानते हैं।

कृदिकारान्त और अकृदिकारान्त—दोनों से विकल्प से ङीष् होता है, पर क्तिन् के अर्थवाले प्रत्यय जिनसे हों तो उनसे नहीं।

शकटी, शकटिः (छोटी गाड़ी)—यहाँ शकटि शब्द इकारान्त है, इससे ङीष् प्रत्यय प्रकृत वार्तिक से हुआ। पूर्ववत् इकार का लोप होकर रूप बना पक्ष में जैसे का तैसा रूप रहा।

पुंयागाद् आख्यायाम् 4.1.48

या पुमाख्या पुंयोगात् स्त्रियां वर्तते, ततो ङीष्। गोपस्य स्त्री—गोपी।

व्याख्याः पुंयोगादिति— जो पुरुष के अर्थ में प्रसिद्ध शब्द पुरुष सम्बन्ध के द्वारा लक्षणा से स्त्री के लिये प्रयुक्त किया जाय, उसे ङीष् प्रत्यय हो। तात्पर्य यह है कि शब्द पुँलिङ्ग हो, उसका प्रयोग पतिपत्नी भाव रूप सम्बन्ध के द्वारा लक्षणा से स्त्री के लिये प्रयुक्त किया जाने लगे—उस समय ङीष् प्रत्यय हो। जैसे हिन्दी में पण्डित की स्त्री को पण्डिताइन कहते हैं वह भले ही पण्डित न हो। उसी प्रकार पुँलिङ्ग शब्द से स्त्रीत्व बोधन के लिये संस्कृत भाषा में भी इस सूत्र से प्रत्यय का विधान किया गया है।

गोपी (गोपस्य स्त्री)। यहाँ गोप शब्द पुँलिङ्ग है। पतिपत्नी—भाव रूप सम्बन्ध को लेकर इस शब्द का उसकी स्त्री के लिये भी प्रयोग होगा, उस समय प्रकृत सूत्र में ङीष् प्रत्यय हुआ। फिर 'यस्येति च' से अन्त्य अकार का लोप होकर रूप सिद्ध हुआ। गोपालन करनेवाले को गोप कहते हैं, उसकी स्त्री को उसके सम्बन्ध से ही गोपी कहा जायगा— उसके लिये गोपालन करने की आवश्यकता नहीं। उसी प्रकार शूद्र की स्त्री होगी चाहे वह स्वयं शूद्र न हो।

(वा) पालकाऽन्तात् न। गो—पालिका। अश्व—पालिका।

व्याख्याः वा पालकाऽन्तादिति—पालकान्त शब्द से पुंयोग में ङीष् न हो।

पुंयोग होने पर भी गोपालक शब्द से ङीष् का निषेध प्रकृत वार्तिक से हुआ। तब अकारान्त होने के कारण टाप् हुआ। तब अग्रिम सूत्र से लकार के उत्तर में वर्तमान अकार के स्थान में इकार आदेश होकर रूप सिद्ध हुआ। अश्व—पालिका—(अश्वपालकस्य स्त्री—अश्वपाल की स्त्री)। यहाँ भी पुंयोग में प्राप्त ङीष् का

पालकान्त होने के कारण प्रकृत वार्तिक से निषेध हुआ। फिर पूर्ववत् टाप् और लकारोत्तरवर्ती अकार के स्थान में अग्रिम सूत्र से इकार आदेश होकर रूप सिद्ध हुआ।

प्रत्यय–स्थात् कात्पूर्वस्याऽत इदाप्यसुपः 7.3.44

प्रत्ययस्थात् कात् पूर्वस्याऽकारस्येकारः स्याद् आपि, स आप सुपः परो न चेत्। सर्विका। कारिका। अकारष्य किम्–नौका? प्रत्यय–स्थात् किम् शक्नोतीति शका। अ–सु.पः किम्? –बहू–परिव्राजका नगरी।

व्याख्याः प्रत्ययस्थादिति–प्रत्यस्थ ककार से पूर्व अकार को इकार आदेश हो टाप् परे रहते, यदि वह टाप् प्रत्यय सुप् से पर न हो।

पूर्वोक्त गो–पालिका और **अश्व–पालिका**–शब्दों में इकार इसी सूत्र से हुआ है। क्योंकि उसमें प्रत्ययस्थ ककार है, उससे पूर्व अकार को ककार से पूर्व स्थान में इसलिये इकार हो गया, टाप् पर है और वह सुप् से पर नहीं। क्योंकि प्रातिपदिक से टाप् हुआ है।

सर्विका। यहाँ सर्व शब्द से स्वार्थ में 'अव्यय–सर्वनाम्नाम् अकच् प्राक् टेः 5.3.71' सूत्र से टि के पूर्व अकच् प्रत्यय होकर 'सर्वक' शब्द बना। स्त्रीत्व विवक्षा में अदन्त होने के कारण इससे 'अजाद्यतष्टाप्' से टाप् प्रत्यय हुआ। तब 'यस्येति च' से अकार लोप होकर 'सर्वका' यह रूप बना। यहाँ ककार अकच् प्रत्यय का है, उससे पूर्व अकार को इस सूत्र से इकार हुआ। क्योंकि उससे पर टाप् भी है, वह सुप से पर भी नहीं। **कारिका** (करनेवाली)। कृ धातु से कर्ता अर्थ में 'ण्वुल्–तुचौ 3.1.133' से ण्वुल् प्रत्यय, वु को अक आदेश, ऋकार को वृद्धि आर् होकर सिद्ध हुए कारक शब्द से स्त्रीत्व–विवक्षा में अदन्त होने के कारण 'अजाद्यष्टाप् से टाप् प्रत्यय हुआ। तब टाप् परे होने के कारण प्रत्यय के तकार से पूर्व अकार को प्रकृत सूत्र से इकार होकर रूप सिद्ध हुआ। अत इति। अकार को इकार होता है–ऐसा इस सूत्र में क्यों कहा? इस लिये कि नौका यहाँ प्रत्यय के ककार से पूर्व औकार को इकार न हो। नौ शब्द से स्वार्थिक क प्रत्यय होने पर टाप् होकर रूप बनता है। प्रत्यय–स्थादिति। ककार प्रत्यय का हो–ऐसा क्यों कहा? इसलिये कि शका में ककार से पूर्व अकार को इकार न हो। यहाँ ककार प्रत्यय का नहीं, धातु का है। शक् धातु से पचादि अच् होने पर टाप् होकर यह रूप, बना है। असुप् इति–टाप् सुप् से परे न हो–ऐसा क्यों कहा? इसलिये कि बहुपरिव्राजका–बहुत सन्यासी जहाँ हो– वह नगरी' यहाँ अकार को इकार न हों। परिव्राजक शब्द परिपूर्वक व्रज् धातु से ण्वुल (अक) प्रत्यय से सिद्ध हुआ है। उसका बहु शब्द के साथ बहुव्रीहि समास हुआ है। समास होने पर सुप का लोप हुआ। तब अर्न्तवखतनी विभक्ति अर्थात् लुप्त सुप् से पर टाप् के होने के कारण यहाँ अकार को इकार नहीं होता।

(वा) सूर्याद् देवतायां चाप् वाच्यः। सूर्यस्य स्त्री देवता सूर्या। देवतायां किम्–

व्याख्याः (वा) सूर्यादिति। देवता जाति की स्त्री रूप अर्थ में पुंयोग में वर्तमान सूर्य शब्द से चाप् प्रत्यय हो। चाप के चकार और पकार इत्संज्ञक हैं। 'पुंयोगाद आख्यायाम्' से प्राप्त ङीष् प्रत्यय का यह बाधक है। सूर्या (सूर्यस्य स्त्री देवता, सूर्य की देवता स्त्री)। यहाँ पुंयोग से स्त्री के अर्थ में वर्तमान सूर्य शब्द से चाप् प्रत्यय हुआ, यहाँस्त्री देवता है। तब 'यस्येति च' से अकार का लोप होकर रूप सिद्ध हुआ।

देवतायामिति–देवता अर्थ में ही चाप् हो क्यों कहा? इसलिये कि यदि स्त्री मनुष्य जाति की हो। वहाँ सामान्य ङीष् प्रत्यय होगा।

(वा) सूर्यागस्त्ययोश्छे च ङ्यां च य–लोपः। सूरी–कुन्ती, मानुषीयम्।

व्याख्याः (वा) सूर्याऽगास्त्योरिति–सूर्य और अगस्त्य शब्दों के यकार का लोप हो छ और ङी प्रत्यय परे रहते।

सूरी सूर्यस्य स्त्री मानुषी–सूर्य की मनुष्य जाति का स्त्री, कुन्ती)। यहाँ पुंयोग के द्वारा मनुष्य जाति की स्त्री अर्थमें वर्तमान सूर्य शब्द से सामान्य पुंयोग–लक्षण ङीप् हुआ। तब 'यस्येति च– से अन्त्य अकार का लोप होने पर प्रकृत वार्तिक से यकार का लोप होकर रूप सिद्ध हुआ।

इन्द्र–वरुण–भव शर्व–रुद्र–मृड–हिमाऽरण्य–यव–यवन–मातुलाचार्याणाम् आनुक् 4.1.49

एषाम् 'आनुक्' आगमः स्यात् ङीष् च। इन्द्रस्य स्त्री–इन्द्राणी। वरुणानी। भवानी। शर्वाणी। रुद्राणी। मृडानी।

व्याख्याः इन्द्रेति–इन्द्र, वरुण, भव, शर्व, रुद्र, मृड, हिम, अरण्य, यव यवन, मातुल और आचार्य –इन शब्दों को ङीष् प्रत्यय ओर आनुक आगम हो। आनुक का उक् भाग इत्संज्ञक है, आन् शेष रहता है और कित् होने के कारण शब्दों के अन्त में होता है। इन्द्र आदि छ और मातुल तथा आचार्य–शब्दों से पुंयोग में ही होता है, पूर्व सामान्य सूत्र से ङीष् सिद्ध है, इस सूत्र से केवल आनुक् विशेष होता है और शेष चारों से दोनो ङीष् और आनुक् होते हैं। इन्द्राणी (इन्द्रस्य स्त्री, इन्द्र की स्त्री)। यहाँ इन्द्र शब्द के पुंयोग में प्रकृत सूत्र से ङीष् और आनुक् आगम हुए। तब'इन्द्र आन् ई' इस दशा में सवर्ण दीर्घ और णत्व होकर रूप सिद्ध हुआ। वरुणानी (वरुण की स्त्री), भवानी, शर्वाणी, रुद्राणी, मृडानी (शिवजी की स्त्री, भव, शर्व, रुद्र और मृड–ये शिवजी के नाम हैं)। इन रूपों की सिद्धि भी इन्द्राणी के समान होती है।

(वा) हिमाऽरण्ययोर्महत्त्वे। महद्हिमम्–हिमानी, महद्अरण्यम्–अरण्यानी।

व्याख्याः (वा) हिमारऽण्योरति– हिम (बरफ) और अरण्य (जंगल) इन दो शब्दों से ङीप् और आनुक् महत्त्व अर्थात् बड़ा अर्थ में हो।

हिमानी (महद् हिमम्–अधिक बरफ)। यहाँ हिम शब्द से महत्व अर्थ में अरण्य शब्द से ङीष् और आनुक् होकर रूप सिद्ध हुआ।

(वा) यवाद् दोषे। दुष्टो यवो–यवानी।

व्याख्याः यववादिति। दोषयुक्त अर्थ में वर्तमान यव (जौ–अन्न) शब्द से ङीष् और आनुक् हो।

यवनानी (यवनानां लिपिः –यवनों की लिपि)। यहाँ यव शब्द से दोष अर्थ में प्रकृत वार्तिक से ङीप् प्रत्यय और आनुक् आगम हुआ।

(वा) यवनात् लिप्याम्। यवनानां लिपिः–यवनानी।

व्याख्याः (वा) यवनादिति। लिपि अर्थ में वर्तमान यवन शब्द से ङीष् प्रत्यय और आनुक् आगम हो।

यवनानी यवनानां लिपिः–यवनों की लिपि)। यहाँ यवन शब्द से लिपि अर्थ में प्रकृत वार्तिक से ङीष् प्रत्यय और आनुक् आगम हुआ। इन चार शब्दों से हिम, अरण्य और यव इन तीन में पुंयोग असम्भव है।

इन विशेष अर्थों में इसीलिये इनका विधान किया गया है। यवन शब्द से पुंयोग अर्थ में सामान्य सूत्र से ङीप् प्रत्यय होकर 'यवनी' रूप बनता है।

(वा) मातुलोपाध्याययोः 'आनुक्' वा। मातुलानी, मातुली। उपाध्यायानी, उपाध्यायी।

व्याख्याः (वा) मातुलेति–मातुल (मामा) और उपाध्याय (गुरु)। इन शब्दों से आनुक् विकल्प से हो।

यहाँ विकल्प आनुक् का ही है, ङीष् तो सामान्य सूत्र से आनुक् के अभाव में भी होता है। मातुल शब्द को आनुक् प्राप्त है, उपाध्याय को नहीं–दोनों का विकल्प से विधान किया–अतः यह प्राप्ताऽप्राप्त विभाषा है। मातुलानी, मातुली (मातुलस्य स्त्री, मामा की स्त्री–मामी) यहाँ मातुल शब्द से पुंयोग में ङीष् और विकल्प से

आनुक् प्रकृत वार्तिक से होकर पहला रूप बना। आनुक् के अभाव में सामान्य ङीष् होकर रूप सिद्ध हुआ। उपाध्यायानी, उपाध्यायी (उपाध्याय–अध्यापक की स्त्री)। यहाँ भी पूर्ववत् आनुक् के विकल्प से दो रूप बने।

(वा) आचार्याद् अणत्वं च। आचार्यस्य स्त्री–आचार्यानी।

व्याख्याः (वा) आचार्यदिति। आचार्य शब्द से पुंयोग में ङीष् और आनुक् होते हैं और नकार को णत्व का निषेध भी। आचार्यानी (आचार्य की स्त्री)। यहाँ पुंयोग में आचार्य शब्द से प्रकृत वार्तिक से ङीष्, आनुक, और णत्व का निषेध–ये तीन कार्य होकर रूप बना। जो स्वयं आचार्य पद पर प्रतिष्ठित हो, उस स्त्री को आचार्या कहा जाता है, वहाँ अदन्तलक्षण टाप् होता है। इसी प्रकार जो स्त्री उपाध्याय की पत्नी न होते हुए स्वयं अध्यापन करती हो उसे उपाध्याया कहा जाता है। यहाँ'या तु स्वयमेवाध्यापिका तत्र वा ङीष् वाच्यः' इस वार्तिक से वैकल्पिक ङीष् हुआ।

(वा) अथ–क्षत्रियाभ्यां वा स्वार्थे। अर्याणी, अर्या। क्षत्रियाणी क्षत्रिया।

व्याख्याः (वा) अर्येति अर्य और क्षत्रिय शब्दों से स्वार्थ में ङीष् और आनुक् विकल्प से हों। स्वार्थ में विधान होने से पुंयोग में नहीं होतां विकल्प कहने से पक्ष में टाप् होता है। अर्याणी, अर्य (वैश्य कुल की स्त्री)। यहाँ अर्य शब्द से स्वार्थ में ङीष् और आनुक् होकर प्रथम रूप बना और अभावपक्ष में अदन्तलक्षण टाप् होकर दूसरा रूप। पुंयोग में ङीष् होकर अर्यी रूप बनता है।

क्षत्रियाणी, क्षत्रिया (क्षत्रिय स्त्री)। यहाँ पूर्ववत् सिद्धि हुई। पुंयोग में यहां भी ङीष् होकर क्षत्रियी रूप बनता है।

क्रीतात् करण–पूर्वात् 4.1.50

क्रीताऽन्ताद् अदन्तात् करणादेः स्त्रियां ङीष् स्यात्। वस्त्र–क्रीती। कव्चित न–धन–क्रीता।

व्याख्याः क्रीतादिति–करण कारक जिसके आदि में और क्रीत शब्द अन्त में हो–ऐसे अदन्त प्रातिपदिक से स्त्रीलिङ्ग में ङीष् हो।

वस्त्र–क्रीती (वस्त्र से खरीदी हुई)–करणकारक उपपद का क्रीत शब्द के साथ 'उपपदम अतिङ् 1.2.19' सूत्र से समास हुआ। 'गतिकारकोपपदानां कृद्भिः सह समासवचनं प्राक् सुबुत्पत्तेः' इस परिभाषा के बल से सुप् आने के पूर्व समास हुआ। इस प्रकार सिद्ध हुए 'वस्त्रक्रीत' प्रातिपदिक से प्रकृत सूत्र से ङीष् प्रत्यय हुआ, क्योंकि यहाँ आदि मं करण वस्त्र है, अन्त में क्रीत शब्द है और वह अदन्त भी है। चिदिति–कहीं यह ङीष् नहीं होता। जैसे धन क्रीता (धनेन क्रीता धन से खरीदी हुई)। यहाँ बाहुलकात् पूर्वोक्त परिभाषा की प्रवृत्ति न होकर सुप् होने पर समास होता है, अतः सुप् के पूर्व लिङ्ग बोधक प्रत्यय टाप् हो जाता है।

स्वाङ्गच् चोपसर्जनाद् अ–संयोगोपधात् 4.1.54

असंयोगोपधम् उपसर्जनं यत् स्वाङ्गम् तदन्ताद् अदन्तात् ङीष् स्यात्। केशान् अतिक्रान्ता–अति–केशी, अति–केशा। चन्द्रमुखी, चन्द्रमुखा। असंयोगोपधात् किम्–सु–गुल्फा। उपसर्जनात् किम्–सु–शिखा।

व्याख्याः स्वाङ्गदिति–जिसकी उपधा में सयांगे नही, ऐसा उपसजर्न–गौणस्वाङ्गवाचकजो शब्द, तदन्त अदन्त प्रातिपदिक से ङीष् विकल्प से हो।

स्वाङ्ग शब्द का यहाँ 'अपना अड्ग' यह अर्थ नहीं, अपि तु पारिभाषिक अर्थ है। उसके तीन लक्षण हैं–

(1) अद्रवं मूर्तिमत् रचाङ्गं प्राणि–स्थम् अ–विकारजम्

(2) अततस्थ ंतत्रदृष्टं च

(3) तेन चेत् तत् तथा–युतम्

1- अद्रव (जो तरल न हो), साकार, प्राणि में वर्तमान और अ–विकारज जो विकार से उत्पन्न न हो को स्वाङ्ग कहते हैं। प्रथम लक्षण के अनुसार जब प्राणी के अङ्ग प्राणी में हो तब उन्हें स्वाङ्ग कहा जाता है।

2- उसमें रहता न हो पर उसमें दिखाई दिया हो।

यह स्वाङ्ग का दूसरा लक्षण है। प्राणी के अङ्ग केश आदि यदि गली में पड़े– हों–गली में रहनेवाले न होकर

भी गली में दिखाई पड़ने के कारण इस दूसरे लक्षण के अनुसार ये स्वाङ्ग कहे जाते हैं। अति–केशी, अति–केशा (केशान् अतिक्रान्ता–केशों का अतिक्रमण करनेवाली)। यहाँ अत्यादयः क्रान्ताद्यर्थे द्वितीयया' से तत्पुरुष समास होने पर केश उपसर्जन हैं, प्राणी में स्थिति और साकार होने के कारण यह स्वाङ्ग है, अतः तदन्त अदन्त प्रातिपदिक 'अतिकेश' से वैकल्पिक ङीष् होकर रूप सिद्ध हुआ। अभावपक्ष–में–अदन्तलक्षण टाप् हुआ।

चन्द्र–मुखी, चन्द्र–मुखा (चन्द्र इव मुखं यस्याः–चन्द्रमा के समान मुखवाली)।यहाँ मुख शब्द प्रथमलक्षणके अनुसार स्वाङ्गवाची है, बहुव्रीहि समास में अन्य पदार्थ के प्रधान होने से मुख यहाँ उपसर्जन भी है। अतः स्वाङ्गवाची उपसर्जन मुखशब्दान्त अदन्त प्रातिपदिक चन्द्रमुख से वैकल्पिक अभावपक्ष में अदन्तलक्षण टाप् होकर रूप सिद्ध हुआ। उपर्युक्त उदाहरणों में केश, मुख आदि स्वाङ्वाचकों की उपधा में संयोग नहीं–अतः, असंयोगोपध होने से प्रकृत सूत्र की प्रवृत्तिहुई। अ–संयोगोपधादिति–संयोग उपधा में न हो–ऐसा क्यों कहा? इसलिये कि सु–गुल्फा–(शोभनौ गुल्फौ यस्याः–सुन्दर गुल्फ गिईठवाली)। यहाँ गुल्फ स्वाङ्ग वाचक है, बहुव्रीहि समास के कारण उपसर्जन भी है, परन्तु इसकी उपधा में लकार और फकार का संयोग है। अतः संयोगोपध होने क कारण यहाँ ङीष् न हुआ। अदन्तलक्षण टाप् होकर रूप सिद्ध हुआ।

उपसर्जनादिति–उपसर्जन से–ऐसा क्यों कहा? इसलिये कि सुशिखा यहाँ न हो। शिखा शब्द 'शीङ् खो स्वश्च' इस उणादि सूत्र से शीङ् धातु से ख प्रत्यय और धातु को स्व होकर बने हुए शिख–शब्द से अदन्तलक्षण टाप् होकर बना है। यदि इस सूत्र में उपसर्जन न कहा जाय तो स्वाङ्गवाची होने से शिखा शब्द से टाप् को बाधकार ङीष् होने लगे।

न क्रोडादि–बह्वचः 4.1.56

क्रोडादेः, बह्वचश्च स्वाङ्गाद् न ङीष्। कल्याण–क्रोडा। आकृति–गणोऽयम्।

व्याख्याः न क्रोडेतिक्रोड आदि गण के और बह्वच् स्वाङ्गवाचक प्रातिपदिक से ङीष् प्रत्यय न हो।

कल्याण–क्रोडा कल्याणी क्रोडा यस्याः–जिसके वक्षस्थल पर कल्याण जनक चिह्न हों–ऐसी घोड़ी)। यहाँक्रोडा शब्द स्वाङ्गवाचक है–यह बहुव्रीहि का अवयव होने से उपसर्जन भी है, उसकी उपधा में संयोग भी नहीं। अतः एतदन्त अदन्त प्रातिपदिक कल्याणक्रोड से ङीष् प्राप्त था। प्रकृत सूत्र से उसका निषेध हुआ। तब अदन्तलक्षण टाप् होकर रूप सिद्ध हुआ। आकृतिगण इति–क्रोडादि आकृतिगण है। सु–जघना (शोभनं जघनं यस्याः–जिस स्त्री का जघन सुन्दर हो)। यहाँ जघन शब्द स्वाङ्ग वाची, उपसर्जन और असंयोगोपध हैं अदन्त प्रातिपदिक सुजधन से ङीष् प्राप्त है। जघन शब्द में बहुत अच् हैं–अतः प्रकृत सूत्र से ङीष् का निषेध हो गया । तब अदन्तलक्षण टाप् होकर रूप सिद्ध हुआ।

नख–मुखात् संज्ञायाम् 4.1.58

न ङीष्।

व्याख्याः नख और मुख –इन दो स्वाङ्गवाची शब्दों से ङीष् प्रत्यय न हो संज्ञा में।

पूर्व–पदात् संज्ञायाम् अ–गः 8.4.3

पूर्वपदस्थाद् निमित्तात् परस्य नस्य णः स्यात् संज्ञायाम् न तु गकार–व्यवधाने। शूर्प–णखा। गौर–मुखा। संज्ञायां किम्–ताम्र–मुखी–कन्या।

व्याख्याः नख–मुखादिति–पूर्वपद में स्थित निमित्त से पर नकार को णकार हो, पर गकार के व्यवधान में न हो।

शूर्प–णखा (शूर्पाणीव नखानि यस्याः–छाजके समान जिसके नख हैं–यह एक राक्षसी का नाम है जो रावण की बहिन थी)। यहाँ स्वाङ्गवाची नख शब्द से प्राप्त ङीष् का पूर्व सूत्र से निषेध हुआ। तब अदन्तलक्षण टाप् हुआ। फिर पूर्व पद शूर्प में स्थित निमित्त रकार से पर नख शब्द के नकार के स्थान में प्रकृत सूत्र से णकार होकर रूप सिद्ध हुआ।

गौर–मुख (गौरं मुखं यस्याः–गौर मुखवाली, यह किसी का नाम है)। यहाँ मुख शब्द के स्वाङ्गवाची होने के कारण प्राप्त 'ङीष्' का प्रकृत सूत्र से निषेध हुआ। तब अदन्तलक्षण टाप् होकर रूप सिद्ध हुआ। **संज्ञायामिति**–संज्ञा में ङीष् का निषेध हो ऐसा क्यों कहा? इसलिये कि ताम्र–मुख (गौर मुखवाली कन्या)। यहाँ निषेध न हो। क्योंकि ताम्रमुखी संज्ञा नहीं, अतः स्वाङ्गक्षण ङीष् होकर रूप सिद्ध हो जायगा।

जातेर –स्त्रीविषयाद् अ–योपधात् 4.1.63

जाति–वाचि, यद् न च स्त्रियां नियतम् अयोपधम्, ततः स्त्रियां ङीष् स्यात्। तटी। वृषली। कठी। बह्वृची। जातेः किम्–मुण्डा। अ–स्त्रीविषयात् किम्–बलाका। अ–योपधात् किम्–क्षत्रिया।

व्याख्याः जातेरिति–जो शब्द जातिवाचक हो, नित्य स्त्रीलिङ्ग न हो और उसकी उपधा यकार न हो–ऐसे अदन्त प्रातिपदिक से ङीष् प्रत्यय हो। जाति से (1) जातिवाचक संज्ञा, (2) ब्राह्मण आदि जाति (3) अपत्य प्रत्ययान्त तथा (4) शाखा के पढ़ने वाला–ये चारों लिये जाते हैं। क्रमशः इनके उदाहरण दिये जाते हैं। तटी–तट जातिवाचक है, यह नित्य स्त्रीलिङ्ग भी नहीं, इसकी उपधा यकार भी नहीं है। अतः इससे प्रकृत सूत्र से जातिलक्षण ङीष् होकर रूप बना। वृषली (वृषल जाति की स्त्री)। यहाँ वृषल शूद्र जाति है। अतः इससे प्रकृत सूत्र से जातिलक्षण ङीष् होकर रूप बना। कठी (कठेन प्रोक्तमधीयाना कठ शाखा को पढ़नेवाली)। यहाँ कठ शब्द शाखावाचक है, कठ वेदकी एक शाखा है। अतः शाखावाची होने से यह जाति है। अतः प्रकृत सूत्र से यहाँ जातिलक्षण ङीष् होकर रूप सिद्ध हुआ। बह्वृची(बह्वचृशाखामधीयानाः –बह्वृच शाखा को पढ़नेवाली)। यहाँ बह्वृच वेद की एक शाखा है, अतःशाखावाची होने से वह जाति है, अतएव प्रकृत सूत्र से जातिलक्षण ङीष् होकर रूप बना।

अपत्ययप्रत्ययान्त का उदाहरण मूल में नहीं दिया। औपगवी (उपगोरपत्यं स्त्री–उपगुकी सन्तान स्त्री जाति)–यहाँ अणन्त होने से 'टिड्–ढाऽणञ् 4.1.15' से प्राप्त ङीष् को बाधकर जातिलक्षण ङीष् होकर रूप सिद्ध हुआ। स्वर में भेद है। जातेरिति–जाति से ही–ऐसा क्यों कहा? इसलिये कि मुण्डा (मुँड़ी हुई) यहाँ ङीप् न हो। यह उपर्युक्त जातिलक्षणों में किसी में नहीं आता।

अ–स्त्रीविषयादिति–नितयस्त्रीड्गि न हो–ऐसा क्यों कहा? इसलिये कि वलाका (पक्षी विशेष)–यहाँ न हो। वलाका शब्द नित्यस्त्रीलिङ्ग है, अतः इससे जातिलक्षण ङीष न हुआ। अदन्तलक्षण टाप् होकर रूप सिद्ध

हुआ। अ–योपधादिति–यकार उपधा में न हो–ऐसा क्यों कहा? इसलिये कि क्षत्रिय जातिकी स्त्री)। यहाँ जातिलक्षण ङीष् न हो। क्षत्रिय शब्द जातिवाचक है, पर इसकी उपधा यकार है।

(वा) योपध–प्रतिषेधे हय–गवय–मुकय–मनुष्य–मत्स्यानाम् अप्रतिषेधः। हयी। गवयी। मुकयी। 'हलस्तद्धितस्य' इति य–लोपः–मनुषी।

व्याख्याः (वा) योषधेति–योषध के निषेध में हय, गवय, मुकय, मनुष्य और मत्स्य–इनको भी वर्जित नहीं समझना चाहिये अर्थात् योपध होने पर भी हय आदि से ङीष् प्रत्यय हो। **हयी** (घोड़ी), गवयी (गवय स्त्री मादा–गवय गो सदृश पशु होता है) और मुकयी मुकच पशु जाति की मादा)–इन शब्दों की उपधा यकार है,तो भी इनसे प्रकृत वार्तिक के द्वारा जातिलक्षण ङीष् हुआ।

मनुषी (मनुष्य जाति की स्त्री)–यहाँ योपध होने पर भी मनुष्य शब्द से प्रकृतवार्तिक के अनुसार ङीष् प्रत्यय हुआ। तब 'यस्येति च' से अन्त्य अकार के लोप होने पर 'हलस्तद्धितस्य 6.4.150' से सकार का लोप होकर रूप सिद्ध हुआ। मानुषी–मानुष शब्द से जातिलक्षण ङीष् होने पर सिद्ध होता है। मत्स्यस्येति–मत्स्य शब्द के यकार का ङी पर रहते लोप हो। मत्सी (मछली)। यकारोपध होने पर भी मत्स्य शब्द से पूर्वोक्त वार्तिक के अनुसार से ङीष् प्रत्यय हुआं तब 'यस्येति च' से अकार का लोप होने पर प्रकृत वार्तिक से यकार का लोप होकर रूप बना गया।

इतो मनुष्य–जातेः 4.1.65

ङीष्। दाक्षी। (वा) मत्स्यस्य ङ्याम्। य–लोपः। मत्सी।

व्याख्याः मनुष्य जातिवाचक इकारान्त प्रातिपदिक से 'ङीष्' प्रत्यय हो।

'जातेरस्त्रीविषयाद्–'इत्यादि सूत्र अदन्त प्रातिपदिक से ङीष् प्रत्यय करते हैं, अतः इकारान्त का प्राप्त नहीं थे। अतः प्रकृत सूत्र से इकारान्त प्रातिपदिक से उसका विधान किया गया। दाक्षी (दक्षस्यापत्यं स्त्री–दक्ष की सन्तान स्त्री)। यहाँ दक्ष शब्द से अपत्य अर्थ में 'अत इञ्4.1.95' इस सूत्र से ठञ् प्रत्यय होकर सिद्ध 'दाक्षि' इस इकारान्त प्रातिपदिक से प्रकृत सूत्र सेङीष् प्रत्यय हुआ। तब 'यस्येति च' से इकार का लोप होकर रूप बना।

ऊङ् उतः 4.1.66

उदन्ताद् अयोपधात् मनुष्य ज्ञाति–वाचिनः स्त्रियाम् ऊङ् स्यात्। कुरूः अ–योपधात् किम्–अध्वर्युः–ब्राह्मणी। (वा) श्वशुरस्योकाराऽकार–लोपश्च। श्वश्रूः

व्याख्याः ऊङ इति–उकारान्त अयोपध मनुष्य जातिवाचीप्रातिपदिक से स्त्रीलिङ्ग में ऊङ् प्रत्यय हो।
ऊङ् का ङकार इत्संज्ञक है।

कुरूः (कुरुजातेः स्त्री, कुरु जाति की स्त्री)। संज्ञा होने से कुरु शब्द जातिवाचक है, इसकी उपधा में यकार भी नहीं है। अतः उकारान्त अयोपध मनुष्यजाति–वाचक कुरु प्रातिपदिक से प्रकृत सूत्र से ऊङ् प्रत्यय हुआ। तब सवर्ण दीर्घ होकर रूप सिद्ध हुआ।

अयोपधादिति–यकारोपध न हो–ऐसा क्यों कहा? इसलिये कि अध्वर्युः ब्राह्मणी–अध्वर्यु शाखा को पढ़नेवाली'–यहाँ ऊङ् न हो। शाखावाचक होने से अध्वर्यु शब्द जातिवाचक है। अध्वर्यु वेद की एक शाखा है। उपधा में यकार होने से यहाँ ऊङ् प्रत्यय नहीं हुआ।

(वा) श्वशुरस्येति– श्वशुर शब्द से स्त्रीलिङ्ग में ऊङ् प्रत्यय हो और शकार से पर उकार का तथा रकार से पर अकार का लोप हो।

उकार और अकार के लोप होने पर शकार और रकार हल् रह जाते हैं।श्वशुर शब्द स 'श्वशुरस्य स्त्री' इस अर्थ में पुंयोगलक्षण ङीष् प्राप्त था। यह ऊङ् प्रत्यय उसका बाधक है।

श्वश्रूः (श्वशूर की स्त्री, सास)। यहाँ श्वशुर शब्द से ऊङ् प्रत्यय और शकार से पर उकार का तथा रकार से पर अकार का लोप होने पर रूप सिद्ध हुआ।

पङ्गोश्च 4.1.68

पङ्गूः।

याख्याः पङ्गोरिति–उकारान्त पङ्गु शब्द से स्त्रीलिङ्ग में ऊङ् प्रत्यय हो। जातिवाचक न होने के कारण पङ्गु शब्द की पूर्वसूत्र से ऊङ् प्राप्त नहीं था। इसलिये इस सूत्र के द्वारा विधान किया गया है।

पङ्गु (लङ्गड़ी)–यहाँ पङ्गु शब्द से प्रकृत सूत्र से ऊङ् प्रत्यय हुआ। तब सवर्ण दीर्घ होने पर रूप सिद्ध हुआ।।

ऊरूत्तरपदाद् औपम्ये 4.1.69

उपमानवाचिपूर्वपदम् ऊरुत्तरपदं यत् प्रातिपदिकम् तस्माद् 'ऊङ्' स्यात्। करभोरूः।

व्याख्याः ऊरूत्तरेति–जिस प्रातिपादिक का पूर्वपद उपमान–वाची और उत्तरपद 'ऊरु' शब्द हो, उससे स्त्रीलिङ्ग में ऊङ्शब्द हो, उससे स्त्रीलिङ्ग में ऊङ् प्रत्यय हो।

करभोरूः (करभौ इव ऊरू यस्याः–हथेली के किनारे के समान ऊरुवाली)। यहाँ करभ पूर्वपद उपमान है और उत्तरपद ऊरू है, अतः 'कुरुभोरु' इस प्रातिपादिक से ऊङ् प्रत्यय हुआ। तब सवर्ण दीर्घ होकर रूप सिद्ध हुआ।

संहित–शफ–लक्षण–वामादेश्च 4.1.70

अनौपम्याऽर्थ सूत्रम्। संहितोरूः। शफोरूः। लक्षणोरूः। वामोरूः।

व्याख्याः संहितेति– ऊरु उत्तरपदवाले प्रातिपदिक के पूर्वपद संहित, शफ, लक्षण और वाम हों तो उससे स्त्रीलिङ्ग में ऊङ् प्रत्यय हो। अनौपम्याऽर्थमिति–यह सूत्र अनौपम्य के लिये है अर्थात् पूर्वपद उपमान जब न हो, तब यह सूत्र प्रवृत्त होगा। उपमान पूर्वपद होने पर पूर्वसूत्र से ही ऊङ् हो सकता है। संहित आदि शब्द उपमान नहीं, अतः पूर्वसूत्र से ऊङ् सिद्ध न था, इसलिये इस सूत्र के द्वारा विधान किया गया।

संहितोरुः (संहितौ ऊरू यस्याः–जिसके ऊरु मिले हुए हों) शफोरू (शफौ ऊरु यस्याः– जिसके ऊरू मिले हुए हों) लक्षणोरुः लक्षणौ ऊरू यस्याः जिसके ऊरु अच्छे लक्षणवाले हों) और वामोरूः (वामोरु शब्दों से ऊङ् प्रत्यय होकर सिद्ध होते हैं।

शाङ्र्गरवाद्यञो ङीन् 4.1.73

शाङ्र्गरवादेः अञो योऽकारः, तदन्ताच् जाति–वाचिनो ङीन् स्यात्। शाङ्र्गरवी। वैदी। ब्राह्मणी।

व्याख्याः ङीन् के ङकार और नकार इत्संज्ञक हैं, केवल ई शेष रहता है। ङीन् प्रत्ययान्त शब्द नित् होने से आद्युदात्त होता है। इस प्रकार ङीप्, ङीष्, ङीन् इन तीनों के ईकार रूप होने पर भी स्वर में अन्तर है।

शाङ्र्गरवी (शृङ्ग्रोपत्य स्त्री– शृङ्रु की स्त्री सन्तान)। यहाँ अपत्य प्रत्ययान्त होने से जातिवाचक होने के कारण शाङ्र्गरव शब्द से ङीन् प्रत्यय हुआ। तब 'यस्येति च' से अन्त्य अकार् का लोप होकर रूप सिद्ध हुआ। वैदी (विदस्य अपत्य स्त्री–विद की स्त्री सन्तान)। यहाँ 'अनृष्यानन्तर्ये विदादिभ्योऽञ् 4.1.104' इस सूत्र से अञ् प्रत्यय होकर सिद्ध हुए वैद शब्द से ङीन् प्रत्यय हुआ। तब 'यस्येति च' से अन्त्य अकार का लोप होकर रूप सिद्ध हुआ।

ब्राह्मणी (ब्राह्मणजातीय स्त्री–ब्राह्मण जाति की स्त्री)। यहाँ जातिवाचक ब्राह्मण शब्द से जातिलक्षण ङीष् प्राप्त था, उसको बाधकर प्रकृत सूत्र से ङीन् प्रत्यय हुआ। तब 'यस्येति च' से अन्त्य अकार का लोप होकर रूप सिद्ध हुआ।

(ग. सू) नृ–नरयोर्वृद्धिश्च। नारी।

व्याख्याः (ग. सू)नृनरयोरिति–नृ और नर शब्द से स्त्रीलिङग् में ङीन् प्रत्यय हो औरवृद्धि भी–नृशब्द से वृद्धि ऋकार को और नर शब्द में आदि अकार को होती है।

ऋकारान्त होने के कारण नृशब्द से 'ऋन्नेभ्यो ङीप्' से ङीप् प्राप्त या और नर शब्द से जातिलक्षण ङीष्। नारी (नरजातीय स्त्री)। यहाँ नृ शब्द से प्रकृत गणसूत्र से ङीन् प्रत्यय और ऋकार को और नर शब्द के आदि अकार को वृद्धि होकर रूप सिद्ध हुआ। नर शब्द से भी प्रकृत गण सूत्र से ङीन् प्रत्यय और अकार को वृद्धि तथा अन्त्य अकार का 'यस्येति च' से लोप होकर पूर्वोक्त 'नारी' रूप ही बना।

यूनस्तिः 3.6.77

युवन्'शब्दात् स्त्रियां 'ति' प्रत्ययः स्यात्। युवतिः।

व्याख्याः यून इति–युवन् शब्द से स्त्रीलिङ्ग में ति प्रत्यय हो।

यवुतिः[1] (युवास्थावाली स्त्री)–यहाँ यवुन्शब्द से स्त्रीलिङग् से प्रकृतसूत्रसे ति प्रत्ययहुआ। तब 'स्वादिष्वसर्वनामस्थाने 4.4.17' से पूर्व की पद संज्ञा होने पर 'प्रातिपदिकान्तस्य 8.2.7' से नकार का लोप होकर रूप सिद्ध हुआ।

(स्त्रीप्रत्यय प्रकरण समाप्त)

1.6 अपनी प्रगति जांचिए

1. प्रत्याहार सूत्र कितने हैं?
2. ह्रस्व, दीर्घ एवं प्लुत संज्ञा किसकी होती है?
3. संयोग संज्ञा के स्वरूप को स्पष्ट करें।
4. 'सुद्ध्युपास्यः' इस पद में कौन–सी सन्धि है?
5. 'स्थानेऽन्तरतमः' इस सूत्र से आप क्या समझते हैं?
6. 'तट्टीका' यहां कौन–सी सन्धि है?

---

[6] - *इससे भी सु आदि प्रत्यय लिङ्गविशिष्ट परिभाषा से आते हैं।*

'युवती' यह दीर्घ ईकारान्त शब्द 'सर्वतोऽक्तिन्नर्थात्' इस बह्वादि गण सूत्रा से वैकल्पिक ङीष् के द्वारा अथवा 'यु मिश्रणामिश्रणयोः' धातु से शतृप्रत्यय होकर सिद्ध हुए 'युवत्' शब्द से उगित् होने के कारण 'उगितश्च' सूत्रा से ङीष् प्रत्यय के द्वारा बनता है।